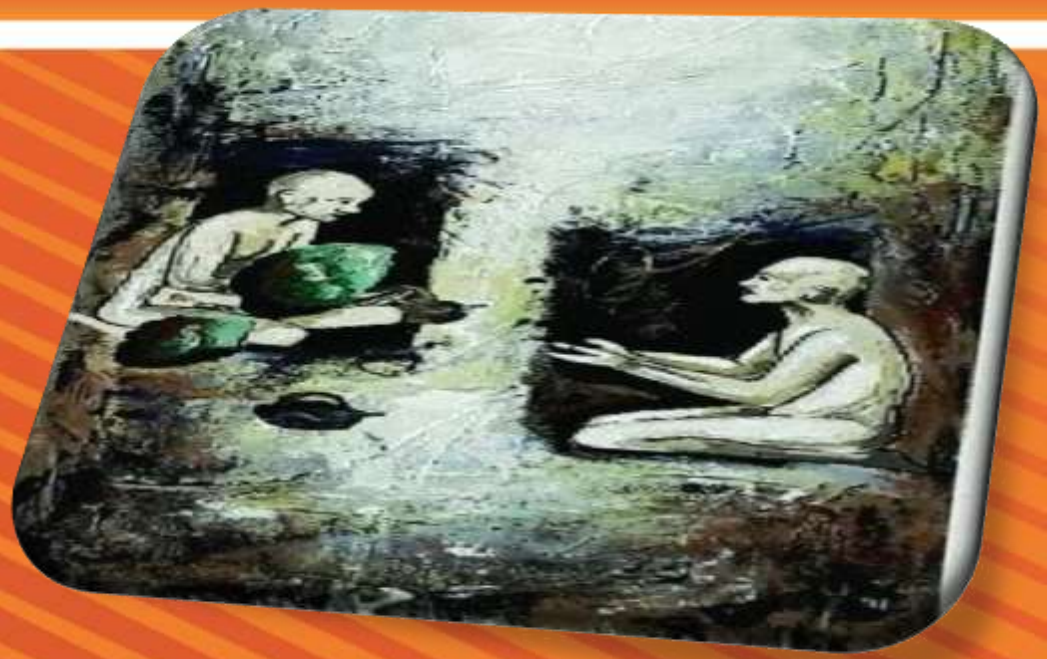

मनःपर्यय-ज्ञान

Presentation Developed By: श्रीमति सारिका छाबड़ा

चिंतियमचिंतियं वा, अद्धं चिंतियमणेयभेयगयं।
मणपज्जवं ति उच्चइ, जं जाणइ तं खु णरलोए॥438॥

⌘अर्थ - चिंतित और अचिंतित और अर्धचिंतित - ऐसे जो अनेक भेदवाले अन्य जीव के मन में प्राप्त हुये अर्थ, उसको जो जाने, वह मनःपर्ययज्ञान है।

⌘मनः अर्थात् अन्य जीव के मन में चिंतवनरूप प्राप्त हुआ अर्थ, उसको पर्येति अर्थात् जाने, वह मनःपर्यय है, ऐसा कहते हैं।

⌘इस ज्ञान की उत्पत्ति मनुष्यक्षेत्र में ही है, बाह्य नहीं है ॥438॥

www.JainKosh.org

मन:पर्यय ज्ञान

- द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की मर्यादा लिए
- दूसरे के मन में स्थित
- रूपी पदार्थ को जाने,
- जिसका -

भूत में	वर्तमान में	भविष्य में
चिंतन किया हो	चिंतन किया जा रहा है	चिंतन किया जायेगा
चिंतित	अर्द्धचिंतित	अचिंतित

मनः

- अन्य जीव के मन में चिंतवनरूप प्राप्त हुआ अर्थ

पर्येति

- जानता है,

वह मनःपर्यय ज्ञान है ।

www.JainKosh.org

उत्पत्ति स्थान	• द्रव्यमन स्थित आत्मप्रदेश
कब जान सकते ?	• किसी के द्वारा पूछने पर अथवा बिना पूछे भी
स्वामी	* छठे से बारहवें गुणस्थानवर्ती संयमी हो, * 7 ऋद्धियों में से कम-से-कम 1 ऋद्धिधारी हो, * वर्धमान चारित्र सहित हो
विषय	* पुद्गल द्रव्य * पुद्गल के संबंध से युक्त संसारी जीव

मणपज्जवं च दुविहं, उज्जुविउलमदि त्ति उज्जुमदी तिविहा।
उज्जुमणवयणे काए, गदत्थविसया त्ति णियमेण॥439॥

⌘अर्थ - मन:पर्यय दो प्रकार का है – ऋजुमति एवं विपुलमति।

⌘ऋजुमति के भी तीन भेद हैं – ऋजुमनोगतार्थविषयक, ऋजुवचनगतार्थविषयक, ऋजुकायगतार्थविषयक।

⌘परकीयमनोगत होने पर भी जो सरलतया मन, वचन, काय के द्वारा किया गया हो ऐसे पदार्थ को विषय करने वाले ज्ञान को ऋजुमति कहते हैं। अतएव सरल मन, वचन, काय के द्वारा किये हुए पदार्थ को विषय करने की अपेक्षा ऋजुमति के पूर्वोक्त तीन भेद हैं ॥439॥

www.JainKosh.org

मन:पर्यय

- ऋजुमति
  - ऋजुमनगत
  - ऋजुवचनगत
  - ऋजुकायगत
- विपुलमति

अर्थ को जानने वाला

ऋजुमन

जैसा पदार्थ है वैसा चिंतने वाला मन

ऋजुवचन

जैसा पदार्थ है, वैसा कहने वाला वचन

ऋजुकाय

जैसा पदार्थ है, वैसी ही अभिनय, संकेत आदि करने वाली काय चेष्टा

www.JainKosh.org

विउलमदी वि य छद्धा, उजुगाणुजुवयणकायचित्तगयं।
अत्थं जाणदि जम्हा, सद्दत्थगया हु ताणत्था॥440॥

⌘अर्थ - विपुलमति के छह भेद हैं – ऋजु मन, वचन, काय के द्वारा किये गये परकीय मनोगत पदार्थों को विषय करने की अपेक्षा तीन भेद और कुटिल मन, वचन, काय के द्वारा किये हुए परकीय मनोगत पदार्थों को विषय करने की अपेक्षा तीन भेद।

⌘ऋजुमति तथा विपुलमति मन:पर्यय के विषय शब्दगत तथा अर्थगत दोनों ही प्रकार के होते हैं। ॥440॥

www.JainKosh.org

विपुलमति मन:पर्यय

ऋजु

- मन
- वचन
- काय

वक्र

- मन
- वचन
- काय

को प्राप्त अर्थ को जानने वाला

दोनों ही मन:पर्ययज्ञानी

शब्द अथवा अर्थ को

प्राप्तकर कार्य करते हैं ।

अर्थात् मन:पर्ययज्ञानी के निकट

कोई पूछे अथवा मौन खड़ा रहे,

तो वे मन:पर्ययज्ञानी तत्संबंधी विषय को

जान लेते हैं ।

www.JainKosh.org

तियकालविसयरूविं, चिंतियं वट्टमाणजीवेण।
उजुमदिणाणं जाणदि, भूदभविस्सं च विउलमदी॥441॥

⌘अर्थ - त्रिकालसंबंधी पुद्गल द्रव्य को वर्तमान काल में कोई जीव चिंतवन करता है, उस पुद्गल द्रव्य को ऋजुमति मनःपर्ययज्ञान जानता है।

⌘पुनश्च त्रिकाल संबंधी पुद्गल द्रव्य को किसी जीव ने अतीत काल में चिंतवन किया था या वर्तमान काल में चिंतवन कर रहा है वा अनागत काल में चिंतवन करेगा ऐसे पुद्गल द्रव्य को विपुलमति मनःपर्ययज्ञान जानता है ॥441॥

www.JainKosh.org

ऋजुमति मन:पर्यय

किसी जीव के द्वारा
वर्तमान काल में
त्रिकाल विषयक पुद्गल
द्रव्य को चिंतवन कीए
जाने पर जानता है ।

विपुलमति मन:पर्यय

किसी जीव के द्वारा

भूत में चिंतित, वर्तमान में
अर्द्धचिंतित, भविष्य में अचिंतित

त्रिकाल संबंधी पुद्गल द्रव्य को

जानता है ।

www.JainKosh.org

सव्वंगअंगसंभव-चिण्हादुप्पज्जदे जहा ओही।
मणपज्जवं च दव्वमणादो उप्पज्जदे णियमा॥442॥

⌘अर्थ - जैसे भवप्रत्यय अवधिज्ञान सर्व अंग से उपजता है और गुणप्रत्यय शंखादिक चिह्नों से उपजता है; तैसे मन:पर्ययज्ञान द्रव्यमन से उपजता है। नियम से अन्य अंगों के प्रदेशों में नहीं उपजता ॥442॥

www.JainKosh.org

हिदि होदि हु दव्वमणं, वियसियअट्ठच्छदारविंदं वा।
अंगोवंगुदयादो, मणवग्गणखंधदो णियमा॥443॥

⌘अर्थ - वह द्रव्यमन हृदयस्थान में प्रफुल्लित आठ पंखुड़ी के कमल के आकार का, अंगोपांग नामकर्म के उदय से मनोवर्गणा नामक स्कंधों से उत्पन्न होता है – ऐसा नियम है ॥443॥

www.JainKosh.org

द्रव्यमन का स्वरूप

स्थान	हृदयस्थान
आकार	विकसित आठ पंखुड़ी के कमलरूप
निमित्त	अंगोपांग नामकर्म का उदय
किससे निर्मित	पौद्गलिक मनोवर्गणारूप पुद्गल स्कंध से
अन्य नाम	नोइन्द्रिय (किंचित् इन्द्रिय)
इनमें निमित्त	* मन:पर्यय * भावमन

णोइंदियं ति सण्णा, तस्स हवे सेसइंदियाणं वा।
वत्तत्ताभावादो, मणमणपज्जं च तत्थ हवे॥444॥

⌘अर्थ - इस द्रव्यमन की नोइन्द्रिय संज्ञा भी है, क्योंकि दूसरी इन्द्रियों की तरह यह व्यक्त नहीं है। इस द्रव्यमन के निमित्त से भावमन तथा मन:पर्ययज्ञान उत्पन्न होता है ॥444॥

www.JainKosh.org

द्रव्यमन को नोइन्द्रिय भी कहते हैं

क्योंकि शेष इन्द्रियों की भांति

इसके व्यक्तता का अभाव है ।

इससे भावमन व मन:पर्ययज्ञान उत्पन्न होता है ।

www.JainKosh.org

मणपज्जवं च णाणं, सत्तसु विरदेसु सत्तइड्ढीणं।
एगादिजुदेसु हवे, वड्ढंतविसिट्ठचरणेसु॥445॥

⌘अर्थ - प्रमत्तादि क्षीणकषाय पर्यन्त सात गुणस्थानों में से किसी एक गुणस्थानवाले के, इस पर भी सात ऋद्धियों में से कम-से-कम किसी भी एक ऋद्धि को धारण करनेवाले के, ऋद्धिप्राप्त में भी वर्धमान तथा विशिष्ट चारित्र को धारण करनेवाले के ही यह मन:पर्ययज्ञान उत्पन्न होता है ॥445॥

www.JainKosh.org

मन:पर्यय ज्ञान किसके होता है ?

1) जो प्रमत्तविरत से क्षीणकषाय गुणस्थानवर्ती मुनिराज हों

2) जो 7 ऋद्धियों में से कम-से-कम 1 ऋद्धिसहित हों

3) जो वर्धमान विशेष चारित्रसहित हों ।

7 ऋद्धियाँ – बुद्धि, विक्रिया, तप, औषध, रस, बल, अक्षीण

www.JainKosh.org

इंदियणोइंदियजोगादिं पेक्खित्तु उजुमदी होदि।
णिरवेक्खिय विउलमदी, ओहिं वा होदि णियमेण॥446॥

⌘अर्थ - ऋजुमति मन:पर्ययज्ञान है, वह अपने वा अन्य जीव के स्पर्शनादिक इन्द्रिय और नोइन्द्रिय (मन) और मन, वचन, काय योग इनके सापेक्ष उपजता है।

⌘पुनश्च विपुलमति मन:पर्यय है, वह अवधिज्ञान की तरह उनकी अपेक्षा बिना ही नियम से उपजता है ॥446॥

www.JainKosh.org

ऋजुमति मन:पर्ययज्ञान

अपने और अन्य के

इन्द्रिय, मन, योग आदि की अपेक्षा से

उत्पन्न होता है ।

विपुलमति मन:पर्ययज्ञान

बिना इन्द्रिय, मन, योग

आदि की अपेक्षा से

अवधिज्ञान की तरह उत्पन्न होता है ।

पडिवादी पुण पढमा, अप्पडिवादी हु होदि विदिया हु।
सुद्धो पढमो बोहो, सुद्धतरो विदियबोहो दु॥447॥

⌘अर्थ - ऋजुमति प्रतिपाती है; विपुलमति सर्वथा अप्रतिपाती है तथा

⌘ऋजुमति शुद्ध है और विपुलमति इससे भी शुद्ध होता है अर्थात् दोनों में विपुलमति की विशुद्धि प्रतिपक्षी कर्म के क्षयोपशम विशेष के कारण अधिक है ॥447॥

www.JainKosh.org

ऋजुमति मन:पर्ययज्ञान	विपुलमति मन:पर्ययज्ञान
प्रतिपाती	अप्रतिपाती
विशुद्ध	विशुद्धतर

परमणसि ट्ठियमट्ठं, ईहामदिणा उजुट्ठियं लहिय।
पच्छा पच्चक्खेण य, उजुमदिणा जाणदे णियमा॥448॥

⌘अर्थ - पर जीव के मन में सरलपने चिंतवनरूप स्थित जो पदार्थ, उसे पहले तो ईहा नामक मतिज्ञान से प्राप्त होकर ऐसा विचार करता है कि अरे ! इसके मन में क्या है ? पश्चात् ऋजुमति मन:पर्ययज्ञान से उस अर्थ को प्रत्यक्षपने से ऋजुमति मन:पर्ययज्ञानी जानता है, ऐसा नियम है ॥448॥

www.JainKosh.org

ऋजुमति मन:पर्यय ज्ञानी

पर जीव के मन में स्थित चिंतवित पदार्थ को

पहले ईहा मतिज्ञानपूर्वक जानता है कि 'इसके मन में क्या है'

फिर ऋजुमतिमन:पर्यय ज्ञान द्वारा उस अर्थ को प्रत्यक्ष जानता है ।

www.JainKosh.org

चिंतियमचिंतियं वा, अद्धं चिंतियमणेयभेयगयं।
ओहिं वा विउलमदी, लहिऊण विजाणए पच्छा॥449॥

⌘अर्थ - विपुलमति मन:पर्ययज्ञान चिन्तित, अचिन्तित अथवा अर्धचिन्तित ऐसा दूसरे के मन में स्थित अनेक भेद सहित अर्थ, उसको पहले प्राप्त होकर 'उसके मन में यह है' ऐसा जानता है। पश्चात् अवधिज्ञान की तरह विपुलमति मन:पर्ययज्ञान उस अर्थ को प्रत्यक्ष जानता है ॥449॥

www.JainKosh.org

विपुलमति मन:पर्यय ज्ञानी

चिंतित	अर्द्धचिंतित	अचिंतित

अर्थ को प्राप्त कर

अवधिज्ञान की भांति उस अर्थ को प्रत्यक्ष देखते हैं ।

www.JainKosh.org

दव्वं खेत्तं कालं, भावं पडि जीवलक्खियं रूविं।
उजुविउलमदी जाणदि, अवरवरं मज्झिमं च तहा॥450॥

⌘अर्थ - द्रव्य प्रति, क्षेत्र प्रति, काल प्रति वा भाव प्रति जीव द्वारा लक्षित अर्थात् चिंतवन किया हुआ जो रूपी पुद्गल द्रव्य वा पुद्गल के संबंध से युक्त संसारी जीव द्रव्य उसको जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट भेद से ऋजुमति वा विपुलमति मन:पर्ययज्ञान जानता है ॥450॥

www.JainKosh.org

मन:पर्ययज्ञान

द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की मर्यादा सहित

जीव के द्वारा चिंतवन किये हुए

रूपी पुद्गल द्रव्य को तथा

पुद्गल-संबंध से युक्त संसारी जीव को

जानता है ।

www.JainKosh.org

अवरं दव्वमुरालिय-सरीरणिज्जिण्णसमयबद्धं तु।
चक्खिंदियणिज्जण्णं, उक्कस्सं उजुमदिस्स हवे॥451॥

⌘अर्थ - ऋजुमति का जघन्य द्रव्य औदारिक शरीर के निर्जीर्ण समयप्रबद्धप्रमाण है तथा

⌘उत्कृष्ट द्रव्य चक्षुरिन्द्रिय के निर्जरा द्रव्यप्रमाण है ॥451॥

www.JainKosh.org

ऋजुमति मन:पर्यय ज्ञान की द्रव्य मर्यादा

जघन्य	• औदारिक शरीर की निर्जरारूप समयप्रबद्ध
उत्कृष्ट	• नेत्र इन्द्रिय की निर्जरारूप द्रव्य

जघन्य द्रव्य से उत्कृष्ट द्रव्य का प्रमाण असंख्यातगुणा हीन स्कन्ध है ।

मणदव्ववग्गणाणम-णंतिमभागेण उजुगउक्कस्सं।
खंडिदमेत्तं होदि हु, विउलमदिस्सावरं दव्वं॥452॥

⌘अर्थ - मनोद्रव्यवर्गणा के जितने विकल्प हैं, उसमें अनंत का भाग देने से लब्ध एक भागप्रमाण ध्रुवहार का ऋजुमति के विषयभूत उत्कृष्ट द्रव्यप्रमाण में भाग देने से जो लब्ध आवे उतने द्रव्य स्कन्ध को विपुलमति जघन्य की अपेक्षा से जानता है ॥452॥

www.JainKosh.org

ध्रुवहार

$$= \frac{\text{मनोवर्गणा के भेद}}{\text{अनन्त}}$$

विपुलमति का जघन्य द्रव्य

$$= \frac{\text{ऋजुमति का उत्कृष्ट द्रव्य}}{\text{ध्रुवहार}}$$

www.JainKosh.org

अट्ठण्हं कम्माणं, समयपबद्धं विविस्ससोवचयम्।
धुवहारेणिगिवारं, भजिदे विदियं हवे दव्वं॥453॥

⌘अर्थ - विस्रसोपचय से रहित आठ कर्मों के समयप्रबद्ध का जो प्रमाण है उसमें एक बार ध्रुवहार का भाग देने से जो लब्ध आवे उतना विपुलमति के द्वितीय द्रव्य का प्रमाण होता है ॥453॥

www.JainKosh.org

विपुलमति का द्वितीय भेद

(विस्रसोपचय रहित 8 कर्मों का समयप्रबद्ध)

ध्रुवहार

www.JainKosh.org

तव्विदियं कप्पाणमसंखेज्जाणं च समयसंखसमं।
धुवहारेणवहरिदे, होदि हु उक्कस्सयं दव्वं॥454॥

⌘अर्थ - असंख्यात कल्पों के जितने समय हैं उतनी बार विपुलमति के द्वितीय द्रव्य में ध्रुवहार का भाग देने से विपुलमति के उत्कृष्ट द्रव्य का प्रमाण निकलता है ॥454॥

www.JainKosh.org

तृतीय भेद = $\frac{\text{द्वितीय भेद}}{\text{ध्रुवहार}}$

चतुर्थ भेद = $\frac{\text{तृतीय भेद}}{\text{ध्रुवहार}}$

इस प्रकार क्रम से असंख्यात कल्पकाल के जितने समय हैं उतनी बार ध्रुवहार का भाग लगाने पर उत्कृष्ट द्रव्य का प्रमाण आता है ।

www.JainKosh.org

विपुलमति का उत्कृष्ट द्रव्य

विपुलमति का द्वितीय भेद

(ध्रुवहार) असंख्यात कल्पकाल

www.JainKosh.org

गाउयपुधत्तमवरं, उक्कस्सं होदि जोयणपुधत्तं।
विउलमदिस्स य अवरं, तस्स पुधत्तं वरं खु णरलोयं॥455॥

⌘अर्थ - ऋजुमति का जघन्य क्षेत्र गव्यूतिपृथक्त्व – दो-तीन कोस और उत्कृष्ट योजनपृथक्त्व - सात आठ योजन है।

⌘विपुलमति का जघन्य क्षेत्र पृथक्त्वयोजन – आठ-नव योजन तथा उत्कृष्ट क्षेत्र मनुष्यलोक प्रमाण है ॥455॥

www.JainKosh.org

मन:पर्यय की क्षेत्र की मर्यादा

	ऋजुमति	विपुलमति
जघन्य	पृथक्त्व कोस (2-3 कोस)	पृथक्त्व योजन (8-9 योजन)
उत्कृष्ट	पृथक्त्व योजन (7-8 योजन)	मनुष्य लोक

www.JainKosh.org

णरलोएत्ति य वयणं, विक्खंभणियामयं ण वट्टस्स।
जम्हा तग्घणपदरं, मणपज्जवखेत्तमुद्दिट्ठं॥456॥

⌘अर्थ - मन:पर्यय के उत्कृष्ट क्षेत्र का प्रमाण जो नरलोक प्रमाण कहा है सो यहाँ नरलोक इस शब्द से मनुष्यलोक का विष्कम्भ (व्यास) ग्रहण करना चाहिये न कि वृत्त, क्योंकि मानुषोत्तर पर्वत के बाहर चारों कोणों में स्थित तिर्यंच अथवा देवों के द्वारा चिंतित पदार्थ को भी विपुलमति जानता है; कारण यह है कि मन:पर्ययज्ञान का उत्कृष्ट क्षेत्र ऊँचाई में कम होते हुए भी समचतुरस्र घनप्रतररूप पैंतालीस लाख योजन प्रमाण है ॥456॥

www.JainKosh.org

विपुलमति मन:पर्यय ज्ञान का उत्कृष्ट क्षेत्र

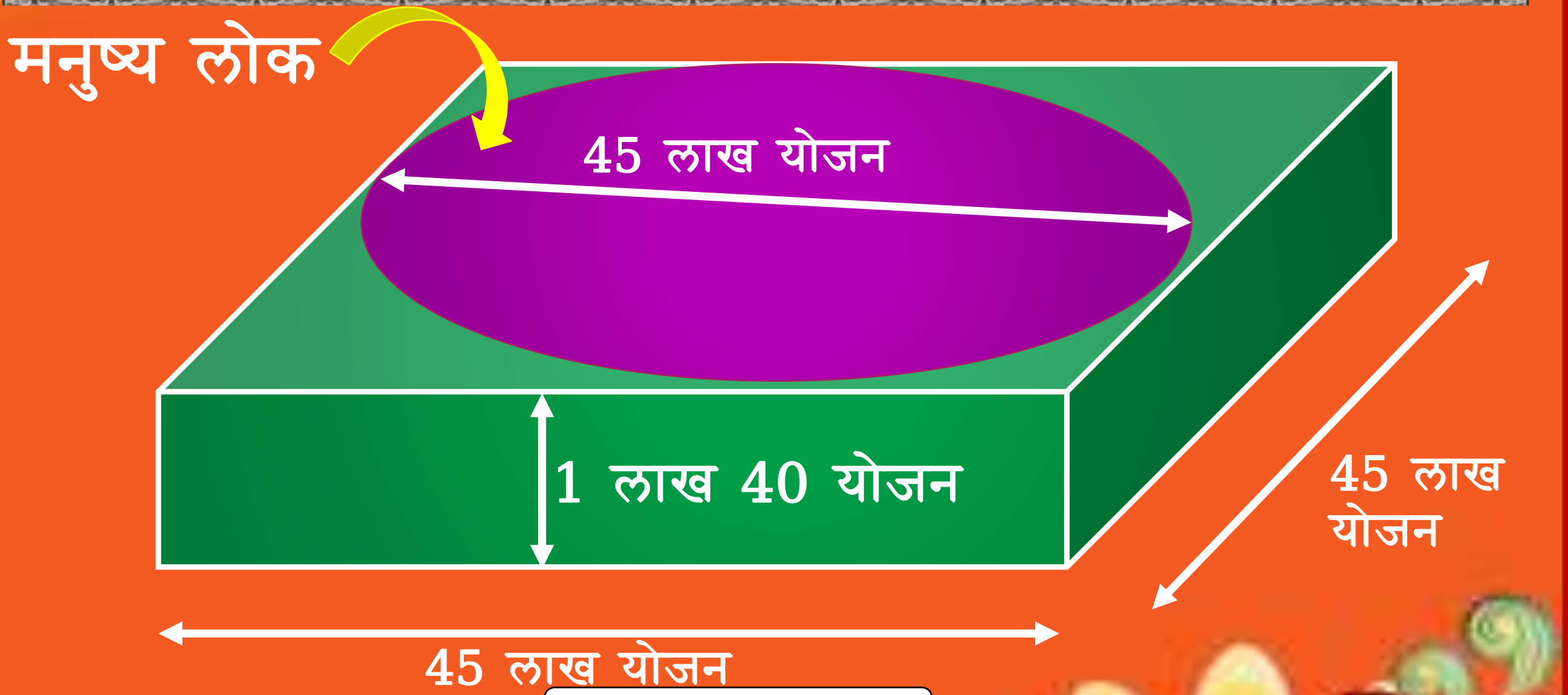

www.JainKosh.org

दुग-तिगभवा हु अवरं, सत्तट्ठभवा हवंति उक्कस्सं।
अड-णवभवा हु अवरमसंखेज्जं विउलउक्कस्सं॥457॥

⌘अर्थ - काल की अपेक्षा से ऋजुमति का विषयभूत जघन्य काल दो-तीन भव तथा उत्कृष्ट सात-आठ भव है।

⌘इसी प्रकार विपुलमति का जघन्य काल आठ-नौ भव तथा उत्कृष्ट पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण भव हैं ॥457॥

www.JainKosh.org

मन:पर्यय की काल की मर्यादा

ऋजुमति

जघन्य — 2-3 भव

उत्कृष्ट — 7-8 भव

विपुलमति

8-9 भव

$\frac{\text{पल्य}}{\partial}$

* अतीत-अनागत 2 भव, वर्तमान को मिलाकर 3 भव । इसी प्रकार सभी भेदों में समझना ।

आवलिअसंखभागं, अवरं च वरं च वरमसंखगुणं।
तत्तो असंखगुणिदं, असंखलोगं तु विउलमदी॥458॥

⌘अर्थ - भाव की अपेक्षा से ऋजुमति का जघन्य तथा उत्कृष्ट विषय आवली के असंख्यातवें भागप्रमाण है, तथापि जघन्य प्रमाण से उत्कृष्ट प्रमाण असंख्यात गुणा है।

⌘विपुलमति का जघन्य प्रमाण ऋजुमति के उत्कृष्ट विषय से असंख्यातगुणा है और उत्कृष्ट विषय असंख्यात लोक प्रमाण है ॥458॥

www.JainKosh.org

मन:पर्यय की भाव की मर्यादा

	ऋजुमति	विपुलमति
जघन्य	आवली / असंख्यात × असंख्यात	आवली / असंख्यात (ऋजुमति के उत्कृष्ट से असंख्यात गुणा)
उत्कृष्ट	आवली / असंख्यात	असंख्यात लोक

www.JainKosh.org

मज्झिम दव्वं खेत्तं, कालं भावं च मज्झिमं णाणं।
जाणदि इदि मणपज्जव-णाणं कहिदं समासेण॥459॥

⌘अर्थ - इसप्रकार द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव का जघन्य और उत्कृष्ट प्रमाण बताया। इनके मध्य के जितने भेद हैं उनको मन:पर्ययज्ञान के मध्यम भेद विषय करते हैं। इस तरह संक्षेप से मन:पर्ययज्ञान का निरूपण किया ॥459॥

www.JainKosh.org

संपुण्णं तु समग्गं, केवलमसवत्त सव्वभावगयं।
लोयालोयवितिमिरं, केवलणाणं मुणेदव्वं॥460॥

⌘अर्थ - यह केवलज्ञान सम्पूर्ण, समग्र, केवल, प्रतिपक्षरहित, सर्वपदार्थगत और लोकालोक में अन्धकार रहित होता है॥460॥

www.JainKosh.org

केवलज्ञान

सम्पूर्ण

- जीव द्रव्य के शक्तिरूप सर्व ज्ञान के अविभागप्रतिच्छेदों की व्यक्तता

समग्र

- मोहनीय और वीर्यान्तराय कर्म के सर्वथा नाश से अप्रतिहत शक्ति एवं निश्चल

केवल

- इन्द्रियों की सहायता से रहित

www.JainKosh.org

केवलज्ञान

असपत्न (प्रतिपक्ष रहित)	• प्रतिपक्षी 4 घातिकर्म के नाश से अनुक्रमरहित
सर्वपदार्थगत	• सकल पदार्थों को प्राप्त
लोकालोक में अंधकार रहित	• लोकालोक में अज्ञान-अंधकाररहित प्रकाशमान

www.JainKosh.org

चदुगदिमदिसुदबोहा, पल्लासंखेज्जया हु मणपज्जा।
संखेज्जा केवलिणो, सिद्धादो होंति अतिरित्ता॥461॥

⌘अर्थ - चारों गति संबंधी मतिज्ञानियों का अथवा श्रुतज्ञानियों का प्रमाण पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण है ।

⌘मन:पर्ययज्ञान वाले जीव संख्यात हैं तथा

⌘केवलियों का प्रमाण सिद्धराशि से कुछ अधिक है ॥461॥

www.JainKosh.org

सम्यग्ज्ञानी जीवों की संख्या

मतिज्ञानी- श्रुतज्ञानी	• पल्य / असंख्यात
मन:पर्ययज्ञानी	• संख्यात
केवलज्ञानी	• सिद्ध + अरहंत = अनन्त + संख्यात = अनन्त = सिद्धों से कुछ अधिक

ओहिरहिदा तिरिक्खा, मदिणाणिअसंखभागगा मणुगा।
संखेज्जा हु तदूणा, मदिणाणी ओहिपरिमाणं॥462॥

⌘अर्थ - अवधिज्ञान रहित तिर्यञ्च मतिज्ञानियों की संख्या के असंख्यातवें भागप्रमाण हैं और

⌘अवधिज्ञान रहित मनुष्य संख्यात हैं तथा

⌘इन दोनों ही राशियों को मतिज्ञानियों के प्रमाण में से घटाने पर जो शेष रहे उतना ही अवधिज्ञानियों का प्रमाण है ॥462॥

www.JainKosh.org

अवधिज्ञानी जीव

= 4 गति के अवधिज्ञानी

= सम्पूर्ण नारकी अवधिज्ञानी	+ तिर्यंच अवधिज्ञानी	+ मनुष्य अवधिज्ञानी	+ सम्पूर्ण देव अवधिज्ञानी
$= \frac{\text{पल्य}}{\text{असंख्यात}}$	+ (मतिज्ञानी तिर्यंच − $\frac{\text{मतिज्ञानी तिर्यंच}}{\text{असंख्यात}}$)	+ संख्यात	+ $\frac{\text{पल्य}}{\text{असंख्यात}}$

$= \frac{\text{पल्य}}{\text{असंख्यात}}$ अथवा $\frac{\text{मतिज्ञानी}}{\text{असंख्यात}} \times (\text{असंख्यात} - 1)$

अर्थात् मतिज्ञानियों का असंख्यात बहुभाग अवधिज्ञानी है ।

सम्यग्दृष्टि तिर्यंचों में बहुभाग जीवों को अवधिज्ञान है ।

मतिज्ञानियों से अवधिज्ञानी कम ही हैं ।

www.JainKosh.org

पल्लासंखघणंगुल-हदसेणितिरिक्खगदिविभंगजुदा।
णरसहिदा किंचूणा, चदुगदिवेभंगपरिमाणं॥463॥

⌘अर्थ - पल्य के असंख्यातवें भाग से गुणित घनांगुल का और जगच्छ्रेणी का गुणा करने से जो राशि उत्पन्न हो उतने तिर्यञ्च और संख्यात मनुष्य, घनांगुल के द्वितीय वर्गमूल से गुणित जगच्छ्रेणी प्रमाण सम्यक्त्व रहित नारकी तथा सम्यग्दृष्टियों के प्रमाण से रहित सामान्य देवराशि, इन चारों राशियों के जोड़ने से जो प्रमाण हो उतने विभंगज्ञानी हैं ॥463॥

www.JainKosh.org

विभंगज्ञानी जीवों का प्रमाण

चारों गतियों के विभंगज्ञानियों का जोड़

= देव → कुल देव – सम्यग्दृष्टि देव

+ नारकी → कुल नारकी – सम्यग्दृष्टि नारकी

+ मनुष्य → संख्यात

+ तिर्यंच → $\frac{\text{पल्य}}{\text{असंख्यात}}$ × घनांगुल × जगतश्रेणी

= विभंगज्ञानी देवों से कुछ अधिक

सण्णाणरासिपंचय-परिहीणो सव्वजीवरासी हु।
मदिसुद-अण्णाणीणं, पत्तेयं होदि परिमाणं॥464॥

⌘अर्थ - पाँच सम्यग्ज्ञानी जीवों के प्रमाण को (केवलियों के प्रमाण से कुछ अधिक) सम्पूर्ण जीवराशि के प्रमाण में से घटाने पर जो शेष रहे उतने कुमतिज्ञानी तथा उतने ही कुश्रुतज्ञानी जीव हैं ॥464॥

www.JainKosh.org

कुमति-कुश्रुतज्ञानी जीवों का प्रमाण

सर्व जीवराशि – 5 सम्यग्ज्ञानी जीव
= संसारी राशि से कुछ कम
(संदृष्टि १३-)

www.JainKosh.org

- Reference : गोम्मटसार जीवकाण्ड, सम्यग्ज्ञान चंद्रिका, गोम्मटसार जीवकांड रेखाचित्र एवं तालिकाओं में
- Presentation created by : **Smt. Sarika Vikas Chhabra**
- For updates / feedback / suggestions, please contact
- Sarika Jain, sarikam.j@gmail.com
- ☎: 94066-82889
- www.jainkosh.org